कहानियाँ सम्बन्ध बुनती हैं | मेरे अनुभव

रजनी द्विवेदी

इस लेख में छोटे बच्चों को कहानियाँ सुनाने के दो अलग-अलग अनुभव प्रस्तुत हैं। एक अनुभव कक्षा का है और दूसरे में एक बच्चे के साथ अनौपचारिक बातचीत है। बच्चों को और मुझे भी ये कहानियाँ सुनने में बहुत मज़ा आया। वयस्क, चाहे वे माता-पिता हों या शिक्षक, अक्सर बातचीत शुरू करने से पहले ही बच्चों के साथ जुड़ने के उद्देश्य निर्धारित करने का प्रयास करते हैं। ये उद्देश्य आमतौर पर सीखने के कुछ पूर्व-निर्धारित परिणामों से जुड़े होते हैं। इसका एक उदाहरण यह है कि किसी कहानी या वृत्तान्त को पढ़ने के बाद, बच्चे कठिन शब्दों के अर्थ को समझ पाएँगे, कहानी को दोबारा बता पाएँगे या कम-से-कम कुछ वाक्यों में कहानी के बारे में बोल पाएँगे इत्यादि। यहाँ वर्णित बातचीत में ऐसे उद्देश्यों पर विचार नहीं किया गया था।

मैंने बस बच्चों को कहानियाँ सुनाईं। जहाँ भी सवाल उठे, हमने चर्चा की। जब भी कोई चुटकुला होता, हँसने के लिए कोई मज़ेदार बात होती, हम साथ में हँसते। कभी-कभी हमने आश्चर्य, प्रतिक्रियाएँ और अपना विस्मय बोध भी साझा किया - "यह कैसे सम्भव हो सकता है?", "यह कैसे हुआ?" या फिर ज़्यादा सटीक ढंग से, "उन्होंने (क़िरदार ने) ऐसा क्यों किया?" और इस पर विचार किया कि क्या जो कुछ किसी ने किया वह सही था या नहीं इत्यादि। दूसरे शब्दों में, कहानी आगे बढ़ने के साथ-साथ, बच्चे अपने विचारों और भावनाओं पर बातचीत को आगे बढ़ाते हैं।

कक्षा में कहानी सुनाना

वह एक विशाल कमरा था जिसमें पहली कक्षा के 25 विद्यार्थी बैठे थे। उस बड़े कमरे में चार चौड़ी-चौड़ी खिड़कियाँ थीं, जिनकी पारों पर बच्चे बैठ सकते थे। स्कूल का नया सत्र 15 दिन पहले शुरू हो चुका था लेकिन, मेरे लिए स्कूल का वह पहला दिन था। इन छोटे बच्चों के साथ काम शुरू करने से पहले, मैंने स्कूल का दौरा किया था, शिक्षकों को पाठ्यपुस्तकों से पढ़ाते हुए देखा था और सोच रही थी कि बच्चों को क्या और कैसे पढ़ाना शुरू किया जाए। फिर, मुझे ख़्याल आया कि बच्चों से जुड़ने के लिए कहानी सुनाना एक अच्छा विचार हो सकता है। सो कुछ और करने से पहले मैंने कुछ दिनों के लिए कहानी सुनाने का फ़ैसला किया।

मैंने पहली कक्षा के उन बच्चों से कहा कि हर दिन, स्कूल के पहले पीरियड में हम एक कहानी साझा करेंगे। मैंने उन्हें कई प्रतियों में कहानियों की दो-तीन अलग-अलग किताबें दिखाईं जो मैं अपने साथ लाई थी। मैंने बच्चों से कहा कि वे आकर मेरे क़रीब बैठें। कुछ बच्चे तो मेरे पास आकर बैठे, जबकि बाक़ी बच्चों ने दूर बैठना ही पसन्द किया। कुछ बच्चे, जो खिड़की की पार पर बैठे थे, वहीं रहे। एक छोटी लड़की खिड़की पर बैठी थी और वह कहानी सुनाने के पूरे समय खिड़की से बाहर देखती रही। कुछ बच्चे अपनी पेंसिलों से खेल रहे थे; शुक्र है कि कुछ बच्चे मेरी ओर देख रहे थे। इसके बाद, मैंने एक चुनी हुई कहानी *'क्या तुम मेरी अम्माँ हो?'* पढ़कर उन्हें सुनाई। यह कहानी पूरी होने पर पीरियड ख़त्म होने तक मैंने एक और कहानी उन्हें सुनाई।

अगले दिन बच्चों ने स्वयं कहा कि वे पिछले दिन की कहानी फिर से सुनना चाहते हैं। कक्षा में बैठने की व्यवस्था पिछले दिन की तरह ही थी। मैंने वही कहानी सुनानी शुरू की *'क्या तुम मेरी अम्माँ हो?'* लेकिन इस बार मैंने कहानी पढ़ी नहीं बल्कि याददाश्त से दोहरा दी। इस कारण कहानी में एक नन्हे पक्षी का जानवरों से मिलने का क्रम बदल गया। खिड़की पर बैठी लड़की ने तुरन्त कहा, "नहीं, चिड़िया का बच्चा पहले कुत्ते से नहीं मिला।" एक दूसरे बच्चे ने कहा, "वह पहले बिल्ली, फिर मुर्गी और फिर कुत्ते से मिला।" किसी दूसरे बच्चे ने कहा कि बिल्ली और कुत्ता अच्छे थे क्योंकि उन्होंने उस नन्हे पक्षी को खाया नहीं। इसी तरह की काफ़ी प्रतिक्रियाएँ अन्य बच्चों की ओर से भी आईं। सो मुझे एहसास हुआ कि मेरी यह सोच ग़लत थी कि बहुत-से बच्चे ध्यान नहीं दे रहे थे; वे सुन रहे थे। दरअसल, वे इतने ध्यान से सुन रहे थे कि कहानी के क्रम को लेकर उन्हें पूरा यक़ीन था। यह तो स्पष्ट था कि बच्चों ने कहानी को पूरी तरह से समझ लिया था और उन्हें कहानी का प्रत्येक पात्र और उसका हिस्सा याद था।

कोई 10 दिन तक मैंने इन बच्चों को कहानियाँ सुनाईं और कविताएँ पढ़ीं। वे अधिक मुखर और बातूनी हो गए और ज़्यादा-से-ज़्यादा कहानियाँ सुनना चाहते थे। हालाँकि, कहानियों की इस कड़ी को रोकना पड़ा, क्योंकि पाठ्यक्रम जो 'पूरा' करना था।

यह विचार बार-बार मुझे परेशान करता है और मन में आता है कि पाठ्यक्रम पूरा करने का मतलब क्या है? क्या कहानी सुनाना पाठ्यक्रम से अलग है? क्या यह पाठ्यक्रम का हिस्सा नहीं होना चाहिए? यदि आप मुझसे पूछें, तो कहानी सुनाने के उन 8-10 दिनों के दौरान बच्चों और मैंने जो हासिल किया वह अभूतपूर्व था। बच्चे कक्षाओं के बाहर भी कविताओं की पंक्तियाँ गुनगुनाते थे और कहानियों के बारे में बात करते थे। इन वार्तालापों में, उनके सवाल, उन सवालों को लेकर उनकी समझ, उनका विश्लेषण और एक कहानी तथा दूसरी कहानी के बीच सम्बन्ध के बारे में उनकी समझ स्पष्ट दिखाई देती थी। उन्होंने सभी प्रकार के प्रश्न पूछे - "क्या एक नन्हा पक्षी अण्डे से निकलने के तुरन्त बाद चलना शुरू कर सकता है?" "एक अण्डे का आकार क्या होता है?" "हमारी क्लास के कुछ बच्चे अण्डा खाते हैं, लेकिन बाक़ी नहीं। क्या अण्डे खाना अच्छा होता है?" "किसके घर में गाय है?" "बछड़ा कैसे चलता है?" और ऐसे कई और सवाल। मैं इस बात को भी रेखांकित करना चाहूँगी कि जहाँ कुछ बच्चों ने पहली कहानी के साथ ही या उसके तुरन्त बाद प्रश्न पूछे, वहीं कुछ बच्चे ऐसे भी थे जिन्होंने इन्हें सुनने के 5-6 दिन बाद ही कुछ कहा।

आज भी जब मैं कहानी कहने के बारे में सोचती हूँ तो पाती हूँ कि यह पढ़ने-लिखने से कहीं अधिक उपयोगी और प्रभावी है। इसका एक व्यक्ति के रूप में बच्चे के विकास से सीधा सम्बन्ध है। शायद बच्चों को पाठ्यपुस्तकें पढ़ना सिखाने की जल्दबाज़ी में, हम सीखने की उनकी उस सहज प्रक्रिया में बाधा डालते हैं, जो कहानियों को सुनने और उनसे जुड़ने के माध्यम से आती है।

किसी बच्चे को कहानियाँ सुनाना

पढ़ने-लिखने के प्रति बच्चों की रुचि विकसित करने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण क़दम यह है कि वे उन पाठों को चुन सकें जिन्हें पढ़ने में उन्हें आनन्द आए। इसलिए, छोटे बच्चों को अपनी पसन्द की सामग्री खोजने के लिए अपने आप किताबें तलाशने का मौक़ा देना, उनमें पढ़ने के प्रति रुचि पैदा करने का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है।

कहानियों को लेकर बच्चों की अपनी पसन्द-नापसन्द होती है। जिस बच्चे को मैंने कहानियाँ सुनाईं वह चार साल का था और हर दिन एक नई और लम्बी कहानी सुनना चाहता था। एक बार तो, उसने वह कहानी सुनने से इंकार ही कर दिया जो मैं उसे पहले सुना चुकी थी। कहानी में, एक भालू का बच्चा मर जाता है (हालाँकि उसे वापस जीवित कर दिया जाता है); बच्चे को यह याद था। मैंने पहली पंक्ति शुरू ही की थी कि उसने तेज़ी से कहा, "नहीं, यह नहीं, मैं यह नहीं सुनना चाहता; मैंने यह सुनी है; भालू का बच्चा मर जाता है।" इस प्रतिक्रिया से मुझे समझ आया कि भालू के बच्चे का मरना उसके दिमाग़ में बैठा रहा और शायद इस बात से वह लगातार परेशान भी रहा आया था।

कहानियाँ बच्चों को उनके आस-पास होने वाली घटनाओं से जुड़ने में मदद करती हैं। जब यह बच्चा लगभग 5 वर्ष का था, तब मैंने डायनासोर के बारे में कहानियों की एक शृंखला पढ़ी थी। उन कहानियों में डायनासोर सम्बन्धी कई तथ्य शामिल थे - उनका आकार, भोजन सम्बन्धी उनकी आदतें आदि। कहानियों में डायनासोर के जीवाश्मों के बारे में भी बात की गई थी और यह भी कि जीवाश्मों की खोज कैसे की जाती है। कुछ दिनों बाद, जीवाश्मों की तलाश के लिए पास के एक बग़ीचे को खोदा गया। नतीजतन, यह चर्चा शुरू हो चली कि जीवाश्म किस चीज़ से बने होते हैं, वे कैसे बनते हैं, इसमें कितना समय लगता है और यह भी कि उन्हें खोजने के लिए कितने प्रयास और धैर्य की आवश्यकता होती है।

अपने एक पर्चे में, वाइगोत्स्की ने कहा है कि कल्पना यूँ ही शून्य में विकसित नहीं होती, कल्पना पूर्व अनुभवों पर आधारित होती है। यह व्यक्तिगत अनुभव या सुनी हुई बात हो सकती है। कहानियाँ दूसरे प्रकार का अनुभव प्रदान करने का उत्कृष्ट तरीक़ा हैं। इनसे कल्पनाशक्ति का विकास होता है और कल्पनाशक्ति कई अलग-अलग दिशाओं में विकसित हो सकती है। कहानी के अलावा, एक पाठक, लेखक के बारे में सोच सकता है; लेखक कौन होते हैं? वे किस प्रकार के लोग होते हैं? वे कहाँ रहते हैं? वे कौन-सी भाषा बोलते हैं? वे कैसे लिखते हैं? उन्होंने कब लिखना शुरू किया? तब उनकी उम्र कितनी रही होगी?

रोआल्ड डाह्ल की *गोइंग सोलो,* जो मैंने इस आठ वर्षीय बच्चे को पढ़कर सुनाई, से उसने अफ़्रीका के बारे में बहुत कुछ सीखा। एक कहानी में लेखक एक लड़ाकू विमान में दुर्घटनाग्रस्त होता है। उसका पूरा शरीर घायल है और उसके समूचे चेहरे पर पट्टियाँ बँधी हुई हैं। वह देख नहीं सकता; केवल सुन सकता है। चूँकि वह नर्स के सवालों के जवाब नहीं दे सकता, सो वह उससे कहती है कि यदि वह सकारात्मक उत्तर देना चाहता है तो बस उसका हाथ दबा दे। इस किताब को पढ़ने के तीन-चार महीने बाद बच्चा बीमार हो गया। मैंने उससे आराम करने और चुप रहने को कहा। उसने कहा, "ठीक है, जब आप मुझसे कोई सवाल पूछें तो बस अपना हाथ मुझे दीजिए, अगर मैं हाँ में जवाब देना चाहूँगा तो आपका हाथ दबा दूँगा।" (वह संकेत कर रहा था कि मुझे पूछने की ज़रूरत पड़ सकती है कि क्या उसे प्यास लगी है, या वह भूखा है या कि वह वॉशरूम जाना चाहता है या खड़ा होना चाहता है आदि)।

जैसा कि कहा जा चुका है, ठोस अनुभवों के साथ बातचीत

करने से कल्पना की ये कड़ियाँ आगे बढ़ती हैं, मज़बूत होती हैं। उदाहरण के लिए, *गोइंग सोलो* को ज़ोर से पढ़ने के बाद, इस बच्चे के मन में कई सवाल उभरे - "क्या अफ़्रीका भारत से बड़ा है?" "क्या यह चीन से भी बड़ा है?" सो हमने एक ग्लोब देखा और पाया कि अफ़्रीका चीन से बड़ा है। तो फिर आपको कौन-सी नई कहानियाँ सुननी चाहिए? आपको और क्या सुनना चाहिए? ऐसे सारे सवाल महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं।

निष्कर्ष

जब मैंने कहानियाँ सुनाना शुरू किया था तो मैं यह नहीं जानती थी कि इससे क्या फ़ायदा होगा या इस अभ्यास से बच्चे क्या सीखेंगे। इनमें से कई बातों का एहसास मुझे बहुत बाद में हुआ, कभी-कभी तो कहानी पढ़ने के महीनों बाद।

ज़रूरी नहीं कि हर बच्चा कहानी को वैसे ही समझेगा जैसा हम उसे समझाना चाहते हैं। अनेक विद्वानों एवं शिक्षकों ने इस बात को रेखांकित किया है। अनीता ध्यानी ने अपने लेख में बताया है कि उन्हें स्कूल में पढ़ी एक कहानी के एक वाक्य का सही अर्थ तब पता चला जब वे स्वयं शिक्षिका बनीं। बच्चे कहानियों से अपने लिए संगत अर्थ बना सकते हैं। हम कभी भी पूरी तरह से यह नहीं समझ सकते कि बच्चे किसी कहानी को कैसे देखते हैं; वे उससे क्या समझते हैं और उसे कैसे समझते हैं। लेकिन, यदि बच्चों में कहानियाँ सुनने की आदत विकसित हो जाए तो कहानियाँ अपना प्रभाव तो छोड़ती ही हैं।

Endnotes

ध्यानी, अनीता (2021) कहानी क्यों? कहानियाँ और समझ के विभिन्न आयाम, *पाठशाला – भीतर और बाहर*, अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी।

References

Imagination and Creativity in Childhood. Lev Semenovich Vygotsky. Journal of Russian and East European Psychology, vol. 42, no. 1, January–February 2004, pp. 7–97. https://www.marxists.org/archive/vygotsky/works/1927/imagination.pdf



रजनी द्विवेदी अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की पत्रिका *पाठशाला - भीतर और बाहर* की सम्पादकीय टीम की सदस्य हैं। उनसे *rajni.dwivedi@azimpremjifoundation.org* पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : मनोहर नोतानी **पुनरीक्षण : भरत त्रिपाठी** **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय